(15)

उड़ो मत रवि अभिमुख तुम गिद्ध

मिला तुम्हें वरदान प्रकृति का पाई दृष्टि अपार।
किन्तु दूरदर्शी न हो सके बदला क्या व्यवहार ।। 1 ।।

उड़ते उच्च अनंत व्योम में लोचन भूतल बद्ध।
मात्र खोजते रहते शव को पिशित भोग सन्नद्ध।। 2 ।।

एक तुम्हारा ही पूर्वज निज धन्य कर गया नाम ।
असुरराज से भी लड़ बैठा धर्म हेतु निष्काम ।। 3 ।।

और दूसरे ने यद्यपि थे दग्ध हो चुके पंख।
पता बताया वानरगण को सीता का निःशंक ।। 4 ।।

किन्तु आज तुम खड़े हो गये रजनीचर के साथ ।
मिला लिया हिंसा छल-बल से खग तुमने भी हाथ।। 5 ।।

इसे कहें युग की बलिहारी या माया विस्तार।
विजय कहें हम अमा निशा की या कि दिवस की हार ।। 6 ।।

होते नभ से सभी तिरोहित भूतल के लघु भेद ।
मिटा सकी पर नही तुंगता भेद बुद्धि यह खेद ।। 7 ।।

अबला की पुकार सुनकर था झपटा क्रुद्ध जटायु।
गिद्ध दृष्टि रहती यौवन पर तेरी सारी आयु ।। 8।।

नहीं रहे हैं केश शीर्ष पर कितना जीवन शेष ।
लाशों के अंबार चाहता तुझे न चिंता लेश ।। 9 ।।

मनोरोगजा क्षुधा, नहीं है यह नैसर्गिक भूख ।
छद्म तृषा से तप्त जन्तु का कण्ठ रहा है सूख ।। 10 ।।

केवल मृत पशु देह भोज्य थी कल तक तुम्हें नभोग ।
अब जीवित निरीह मानव का उडा रहे हो भोज ।। 11 ।।

करो न क्षत-विक्षत इस तन को अभी शेष है प्राण ।
अभी श्वास है, किन्तु नहीं बल, है अशक्य परित्राण ।। 12 ।।

रोको चंचु निपात बनो मत वृक तुम केवल गिद्ध।
मृत को खाओ है मुमूर्षु भक्षण तव हेतु निषिद्ध।। 13 ।।

देखो फैली अग्नि चतुर्दिक देखो वसुधा घाव।
देखो मानवता के व्रण से पुष्कल रूधिर बहाव ।। 14 ।।

कोमल दीर्घ उँगलियों वाला खींच रहे जो हाथ।
देता था दरियाँ बुनने में यह निज पति का साथ ।। 15 ।।

मत मारो तुम चोंच कण्ठ पर इससे निकले गीत ।
गए श्रवण पथ से उरतल तक लाए मन को जीत।। 16 ।।

रूधिर सने घुंघराले चिपके अलकों वाला भाल।
पता था असंख्य चुम्बन निज जननी के नित बाल ।। 17 ।।

और विपुल यह वक्ष धारता अतुलित धृति अभिमान ।
स्वयं और परिजन हित बसते थे कितने अरमान ।। 18 ।।
प्रिया जननि सुत और देश हित कितने थे शुभ भाव ।
आज पड़ा भूलुठित विगत असु ज्यों प्रत्यक्ष अभाव ।। 19 ।।

निज बल गर्वित यह मत सोचो बस तुम भक्षक घोर।

किसने देखा है इस जग में अपर काल का छोर ।। 20 ।।

जल जाएंगे पंख उड़ो मत रवि अभिमुख तुम गिद्ध।
अंशुमान संस्पर्श मनोरथ कभी न होगा सिद्ध।। 21 ।।

कर स्वपक्ष बलमान, फलित था संपाती उन्माद।
गिरा भूमि पर दग्धपक्ष हो, पाया गुरू अवसाद ।। 22 ।।

ये दुर्दिन विलोक वसुधा के उतर न आए भानु ।
नभ बरसाने लगे न होकर कुपित अजस्त्र कृशानु।। 23 ।।

पड़े रहोगे दग्धपक्ष भू पर सक्रन्द अविराम ।
हरिगण आएंगे न खोजने नहीं सबान्धव राम ।। 24 ।।

दिनांक 31.12.2008 -शिव कुमार मिश्र-